जलवायु परिवर्तनः चुनौतियों से निपटने में अगला कदम

संयुक्त राष्ट्र महासभा के प्रस्ताव के संदर्भ में भारत को जलवायु-परिवर्तन के मुद्दों पर आईसीजे में अपनी बात रखने में संकोच नहीं करना चाहिए। बता रहे हैं श्याम सरन

संयुक्त राष्ट्र महासभा के 29 मार्च, 2023 के प्रस्ताव (ए/आरईएस/77/276) को आम सहमति से अपनाए जाने के बाद जलवायु परिवर्तन जैसे संवेदनशील मुद्दे को लेकर एक उत्साह का वातावरण बना है। इस प्रस्ताव के जरिये जलवायु परिवर्तन के मामले में सदस्य देशों के दायित्व/बाध्यता के संबंध में अंतरराष्ट्रीय न्यायालय (आईसीजे) से परामर्शदायी राय मांगी गई है। जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों से निपटने की दिशा में इस प्रस्ताव को मील का पत्थर माना जा रहा है क्योंकि इसे 133 सदस्य देशों द्वारा सह-प्रायोजित किया गया था। हालांकि आईसीजे की परामर्शदायी राय सदस्य देशों पर कानूनी रूप से बाध्यकारी नहीं है। लेकिन यह नैतिक मायने तो रखता ही है।

आईसीजे से इस बात को लेकर भी कानूनी राय मांगी गई है कि आखिर उन देशों को क्या कानूनी अंजाम भुगतने होंगे जिनके कृत्यों और चूक से जलवायु को इस तरह से नुकसान होता है कि यह दूसरों को विशेष रूप से छोटे विकासशील द्वीपीय देशों और 'वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों' को प्रभावित करता है। इस प्रस्ताव को तैयार करने में लगभग चार साल लगे और इस अभियान का नेतृत्व दक्षिण-पश्चिमी प्रशांत महासागर के द्वीपीय देश वैनूआटू ने किया। अंततः इसे 18 देशों के एक कोर ग्रुप द्वारा संचालित किया गया, जिसे आईसीजेएजीरोफोर के रूप में जाना जाता है, जिसमें अन्य द्वीपीय राज्य, अफ्रीकी राज्य और यहां तक कि जर्मनी और पुर्तगाल भी शामिल हैं। भारत न तो इस समूह का हिस्सा और न ही इस प्रस्ताव का सह-प्रायोजक था। बहुपक्षीय मंचों पर जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर भारत की सक्रियता को देखते हुए यह असामान्य प्रतीत हो सकता है। लेकिन भारत की सोची समझी दूरी के अच्छे कारण हो सकते हैं। अमेरिका भारत की तरह आम सहमति का हिस्सा बना लेकिन अपने वोट पर एक बयान में अपनी आपत्तियों को स्पष्ट कियाः 'हमें गंभीर चिंता है कि यह प्रक्रिया हमारे सामूहिक प्रयासों को जटिल बना सकती है और हमें इन साझा लक्ष्यों को प्राप्त करने के करीब नहीं लाएगी।' बयान में यह भी कहा गया है कि आईसीजे के समक्ष रखे गए मुद्दों को निर्दिष्ट मंचों पर चल रही बहुपक्षीय वार्ताओं में सबसे अच्छी तरह से संबोधित किया गया था। चीन ने कथित तौर पर इसी तरह की आपत्तियां व्यक्त की लेकिन आम सहमति में शामिल भी हो गया।

भारत इन विचारों को साझा करता है लेकिन देश के प्रतिनिधिमंडल ने मतदान से पहले या बाद में अपनी चिंता दर्ज कराने के लिए स्पष्टीकरण देने से परहेज किया।

यह प्रस्ताव वर्तमान कृत्यों और चूक पर केंद्रित है। जिसमें पृथ्वी के वायुमंडल में पहले से ही संचित ग्रीनहाउस गैसों के भंडार के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार देशों की ऐतिहासिक जिम्मेदारी की धारणा गायब है। आईसीजे की राय का उपयोग भारत जैसे देशों पर दोष मढ़ने के लिए किया जा सकता है, जिनके यहां इन ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन आर्थिक विकास के दौरान अनिवार्य रूप से बढ़ जाएगा। बावजूद इसके कि भारत ऐसे उत्सर्जन को सीमित करने और जीवाश्म ईंधन से ऊर्जा के नवीकरणीय और स्वच्छ स्रोतों की ओर तेजी से आगे बढ़ने की दिशा में महत्त्वाकांक्षी प्रयास कर रहा है।

ऑस्ट्रेलिया और जर्मनी जैसे औद्योगिक देशों और बाकी यूरोपीय संघ के देशों ने प्रस्ताव का समर्थन किया है और इसकी तरफदारी भी की है क्योंकि ऐतिहासिक जिम्मेदारी का विचार, जो 1992 के जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी) का एक प्रमुख तत्त्व है, को इस प्रस्ताव में नजरअंदाज कर दिया गया है। इन देशों को वर्तमान और अनुमानित उत्सर्जन पर ध्यान केंद्रित करने और भारत जैसे देशों को निशाने पर लेने में खुशी होगी।

जलवायु परिवर्तन से 'नुकसान और क्षति' को लेकर मुआवजे जैसे महत्त्वपूर्ण मुद्दे का प्रस्ताव में कोई संदर्भ नहीं है। जबकि यह मुद्दा मिस्र के शर्म अल-शेख में यूएनएफसीसीसी के पिछले साल नवंबर में हुए सम्मेलन में इस बाबत लिए गए निर्णय के बाद बहुपक्षीय जलवायु परिवर्तन एजेंडे में प्रमुखता से शामिल रहा है। यह उन विकसित देशों के लिए एक रियायत रही होगी, जिन्होंने अपने जीवाश्म ईंधन-आधारित विकास के वर्षों के परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन से पीड़ित देशों को क्षतिपूर्ति करने की अपनी कानूनी जिम्मेदारी की धारणा का कड़ा विरोध किया है। यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न है जिसे आईसीजे के समक्ष रखा जाना चाहिए और भारत को इस पर ध्यान देना चाहिए।

19 अप्रैल, 2023 को जारी आईसीजे की एक प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार, संयुक्त राष्ट्र के प्रस्ताव में उठाए गए मुद्दों पर सदस्य देशों से लिखित प्रस्तुतियां आमंत्रित की जाएंगी और अदालत को उसकी परामर्शदायी राय के लिए भेजा जाएगा। संयुक्त राष्ट्र और इसकी विशेष एजेंसियों को भी उठाए गए मुद्दों के संबंध में दस्तावेज जमा करने की अनुमति है। इन प्रस्तुतियों के प्राप्त होने और आईसीजे की वेबसाइट पर पोस्ट करने के बाद, सदस्य देशों और संयुक्त राष्ट्र और इसकी एजेंसियों द्वारा उन पर और टिप्पणियां आमंत्रित की जाती हैं। अंतिम चरण में, अदालत सार्वजनिक बैठकें आयोजित करती है, जिसमें सदस्य देशों के प्रतिनिधि मौखिक प्रस्तुति दे सकते हैं, भले ही उनमें से कुछ ने लिखित प्रस्तुतियां न दी हों। अदालत तब विचार-विमर्श समाप्त करेगी और अपने सामने रखे गए विभिन्न दृष्टिकोणों पर विचार करने के बाद अपनी परामर्शदायी राय देगी।

पिछले अनुभव के आधार पर, यह उम्मीद की जाती है कि अदालत साल के अंत तक या अगले साल की शुरुआत में अपनी परामर्शदायी राय की घोषणा करेगी।

भारत को उठाए गए मुद्दों पर अपने स्वयं के सुविचारित विचारों को दर्शाते हुए आईसीजे के सामने अपनी बात रखने में संकोच नहीं करना चाहिए। न ही उसे अन्य राज्यों की दलीलों पर टिप्पणी करने से हिचकना चाहिए। भारत को अदालत में सार्वजनिक सुनवाई में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए। यह विचार किया जा सकता है कि चूंकि प्रस्ताव को भारी समर्थन मिला है, भारत के लिए यह सबसे अच्छा हो सकता है कि वह अदालत में भी अपनी मौजूदगी को सीमित रखे और प्रक्रिया को बाधित न करे। ऐसा न करने पर भारत के हितों का स्वतः नुकसान हो सकता है।

एक, प्रस्तुतीकरण में यह इंगित किया जाना चाहिए कि यूएनएफसीसीसी या 1992 के रियो कन्वेंशन के रूप में पहले से ही एक जलवायु परिवर्तन संधि है, जिसमें जलवायु परिवर्तन को लेकर सदस्य देशों के कानूनी दायित्वों को स्पष्ट रूप से बताया गया है। आईसीजे को एक और कानूनी फ्रेमवर्क (ढांचा) स्थापित करने के बजाय यूएनएफसीसीसी के सिद्धांतों और प्रावधानों की वैधता की पुष्टि करनी चाहिए।

दो, जलवायु परिवर्तन को लेकर कार्रवाई के लिए राज्यों के कानूनी दायित्वों को परिभाषित करने में, इक्विटी और न्यायसंगत बोझ साझा करने के मौलिक सिद्धांत को दोहराया जाना चाहिए।

तीसरा, जलवायु न्याय ऐतिहासिक उत्तरदायित्व के पहलू की उपेक्षा नहीं कर सकता। वैसे देश जो वातावरण में ग्रीनहाउस गैसों के संचय और कहें तो मुख्य रूप से वैश्विक जलवायु परिवर्तन के लिए जिम्मेदार हैं, उन्हें उत्सर्जन को कम करने और विकासशील देशों द्वारा इस दिशा में किए जा रहे प्रयासों की ज्यादा से ज्यादा मदद का बीड़ा उठाना चाहिए। साझा लेकिन अलग-अलग जिम्मेदारी और संबंधित क्षमताओं का सिद्धांत जो इसे दर्शाता है, उसे दोहराया जाना चाहिए। एक अलग पेपर में जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिए भारत द्वारा अपनाए गए महत्त्वाकांक्षी उपायों का विवरण होना चाहिए।

और चौथा, प्रस्तुतीकरण में यह इंगित किया जाना चाहिए कि यह मुट्ठी भर औद्योगिक देश थे जिन्होंने क्योटो प्रोटोकॉल के तहत अपने कानूनी दायित्वों का खुलेआम उल्लंघन किया और अनुपालन प्रक्रिया के तहत दंडात्मक प्रावधानों का बगैर सामना किए इससे बचकर निकल गए। शुरुआती तौर पर अदालत को इन बातों को ध्यान में रखना चाहिए और अपनी विश्वसनीयता बढ़ानी चाहिए।